डॉ. मीरा कुमारी
संस्कृत विभाग, सी. एम. जे. कॉलेज, खुटौना
ललित नारायण मिथिला विश्विद्यालय, दरभंगा, बिहार
ईमेल आइडी - kmeera573@gmail.com
Mobile number- 6287538352

वर्ग- बीए पार्ट 1 (H) दिनांक - 20-05-2020

विषय- द्वितीय पत्र (श्रीमद्भगवद्गीता)

यस्मान्नोद्विजते लोकों लोकान्नोद्विजते च यः ।

हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः से च मे प्रियः ।।15।।

अर्थ --जिससे कोई भी जीव उद्वेग को प्राप्त नहीं होता और जो स्वयं भी किसी जीव से उद्वेग को प्राप्त नहीं होता, तथा जो हर्ष, अमर्ष ,भय और उद्वेग आदि से रहित है -वह भक्त मुझको प्रिय है।

प्रश्न--जिससे कोई भी जीव उद्वेग को प्राप्त नहीं होता -भक्त जानबूझकर किसी को उद्विग्न नहीं करता या उसे किसी को उद्वेग होता ही नहीं? इसका क्या अभिप्राय है?

उत्तर--सर्वत्र भगवत् बुद्धि होने के कारण भक्त जान -बूझकर तो किसी को दुःख ,संताप ,भय और क्षोभ पहुंचा ही नहीं सकता बल्कि उसके द्वारा तो स्वाभाविक ही सब की सेवा और परम हित ही होते हैं।अतएव उसकी ओर से किसी को कभी उद्वेग नहीं होना चाहिए ।यदि भूल से किसी को उद्वेग होता है तो उसमें उसके अपने अज्ञान जनित राग, द्वेष और ईर्ष्यादि दोष ही प्रधान कारण है, भगवत् भक्त नहीं। क्योंकि जो दया और प्रेम की मूर्ति है एवं दूसरों का हित करना ही जिसका स्वभाव है- वह परम दयालु प्रेमी भगवत प्राप्त भक्त तो किसी के उद्वेग का कारण हो ही नहीं सकता।

प्रश्न --भक्तों को दूसरे किसी प्राणी से उद्वेग क्यों नहीं होता? उसे कोई भी प्राणी दुःख देते ही नहीं या दुःख के हेतु प्राप्त होने पर भी उसे उद्वेग (क्षोभ) नहीं होता?

उत्तर-- भगवान् को प्राप्त ज्ञानी भक्त का सब में समभाव हो जाता है, इस कारण वह जान-बूझकर अपनी ओर से ऐसा कोई भी कार्य नहीं करता ,जिससे उसके साथ किसी का द्वेष हो।अतएव दूसरे लोग भी प्रायः उसे दुःख पहुंचाने वाली कोई चेष्टा नहीं करते। तथापि सर्वथा यह बात नहीं कही जा सकती कि दूसरे कोई प्राणी उसकी शारीरिक या मानसिक पीड़ा के कारण बन ही नहीं सकते। इसलिए यही समझना चाहिए कि ज्ञानी भक्त को भी प्रारब्ध के अनुसार पर इच्छा से दुःख के निमित्त तो प्राप्त हो सकते हैं, परंतु उसमें राग, द्वेष का सर्वथा अभाव हो जाने के कारण बड़े -से- बड़े दुःख की प्राप्ति में भी वह विचलित नहीं होता (6/22),इसीलिए ज्ञानी भक्तों को किसी भी प्राणी से उद्वेग नहीं होता।

प्रश्न --भक्त को उद्वेग नहीं होता, यह बात इस श्लोक के पूर्वार्ध में कह दी गई, फिर उत्तरार्ध में पुनः उद्वेग से मुक्त होने के लिए कहने का क्या अभिप्राय है?

उत्तर -- पूर्वार्ध में केवल दूसरे प्राणी से उसे ,उद्वेग नहीं होता, इतना ही कहा गया है। इससे पर इच्छा जनित उद्वेग की निवृत्ति तो हुई, किंतु अनिच्छा और स्वेच्छा से प्राप्त घटना और पदार्थ में भी तो मनुष्य को उद्वेग होता है, इसलिए उत्तरार्ध में पुनः उद्वेग से मुक्त होने की बात कह कर भगवान् यह सिद्ध कर रहे हैं कि भक्त को कभी किसी प्रकार भी उद्वेग नहीं होता।

प्रश्न --हर्ष और उद्वेग से मुक्त कहने से भी भक्त की निर्विकारता सिद्ध हो ही जाती है, फिर अमर्ष और भय से मुक्त होने की बात क्यों कही गई?

उत्तर-- हर्ष और उद्वेग से मुक्त कह देने से निर्विकारता तो सिद्ध हो जाती है पर समस्त विकारों का अत्यंत अभाव स्पष्ट नहीं होता। अतः भक्त में संपूर्ण विकारों का अत्यंत अभाव होता है, इस बात को विशेष स्पष्ट करने के लिए अमर्ष और भय का भी अभाव बतलाया गया।

अभिप्राय यह है कि वास्तव में मनुष्य को अपने अभिलषित मान, बड़ाई और धन आदि वस्तुओं की प्राप्ति होने पर जिस तरह हर्ष होता है ,उसी तरह अपने ही समान या अपने से अधिक दूसरों को भी उन वस्तुओं की प्राप्ति होते देखकर प्रसन्नता होनी चाहिए ,किंतु प्राय: ऐसा न होकर अज्ञान के कारण लोगों को उल्टा अमर्ष से होता है ,और यह अमर्ष विवेकशील पुरुषों के चित्त में भी देखा जाता है। वैसे ही इच्छा, नीति और धर्म के विरुद्ध पदार्थों की प्राप्ति होने पर उद्वेग तथा नीति और धर्म के अनुकूल भी दु:खप्रद पदार्थों की प्राप्ति होने पर या उसकी आशंका से भय होता देखा जाता है।दूसरों की तो बात ही क्या, मृत्यु का भय तो विवेकियों को भी होता है। किंतु भगवान् के ज्ञानी भक्तों को सर्वत्र सद्बुद्धि हो जाती है और वह संपूर्ण क्रियाओं को भगवान् की लीला समझता है। इस कारण ज्ञानी भक्त को न अमर्ष होता है और न भय ही होता है-- यह भाव दिखाने के लिए ऐसा कहा गया है।